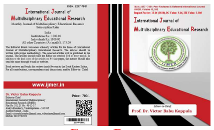
Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer-Peer Reviewed, Refereed & Open Access International Journal - As per UGC Norms
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:4(2), April 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

वेदों में राष्ट्र भावना

डॉ. नवीन चन्द,

सहायकाचार्य, संस्कृत-विभाग, एस.एल. बावा डी.ए.वी. कॉलेज,बटाला

वेद विश्व साहित्य की प्राचीन अनमोल धरोहर है। भारतीय व पाश्चात्य विद्वानों में वेद की रचना व काल के बारे में विविध मत मतान्तर है। वेदों में केवल आध्यात्मिक ही नहीं अपितु जीवन से निगडित प्रत्येक विषय का स्पर्श किया गया है। जिसमें यज्ञ, ब्रह्मविद्या, अलग-अलग देवताओं की स्तुति, रोग, दार्शनिक विषय, विविध संवाद सूक्त, सामगान, न्यायव्यवस्था आदि के साथ राष्ट्रप्रेम, राष्ट्रभावना व उसको प्रेरित करने के लिए अनेक ऋषियों ने अनेको मन्त्रों का दर्शन कर भावी पीढी के लिए एक शुभ संकल्प देने का उत्कृष्ट प्रयत्न किया है। चार वेदों में राष्ट्रप्रेम और राष्ट्रभावना के बारे में सबसे ज्यादा अथर्ववेद में इसका वर्णन किया गया है। अथर्ववेद का भूमि सूक्त इन सबमें सबसे ज्यादा अवलोकन योग्य है।

भूमि सूक्त में नदी, समुद्र, पर्वत, भूमि आदि का वर्णन करते हुए इस मातृभूमि के प्रति प्रजा, राजा, अधिकारी, सेवक, सैनिक आदि लोगों के क्या-क्या कर्तव्य हैं। इन सबके बारे में विस्तार से वर्णन है। हम सब लोगों में क्षत्र, शक्ति, तप, ब्रह्म शक्ति, सत्य आदि को धारण करने वाले हम हों । हमारे देश की तरफ किसी ने भी कुदृष्टि की तो हम उसको नष्ट करने वाले वीर प्रजाजन हों ऐसी उदात्त प्रार्थना है। भूमि सूक्त का "**माता भूमिः पुत्रो·हं पृथिव्याः**[i]" अर्थात हे भूमाते! तू मेरी माता है और मैं तेरा पुत्र हूँ। इसी का प्रभाव आगे "**जननी जन्म भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी**[ii]" अर्थात् माता और मातृभूमि ये दोनों ही स्वर्ग से भी महान है। वैदिक साहित्य के विचारों का समयानुसार वैदिक व लौकिक साहित्य की विविध साहित्य प्रकारों में हमें देखने को मिलता है।

आज तक भारत पर हूण, शक, यवन, अंग्रेज आदि विदेशियों ने अनेक बार आक्रमण किया व इसको अनेकों वर्ष तक गुलाम बनाये रखा तब भी अनेक परिवर्तन होने के बावजूद भारत की राष्ट्रीयता, राष्ट्रीय भावना आज तक चली आ रही है। कोई भी आंधी, तूफान उसके चमक को कम नहीं कर सका। इसी बात को ध्यान में रखकर उर्दू कवि इकबाल ने कहा है- "**कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी**" यह उपर्युक्त पंक्ति कहकर हमारी राष्ट्रीयता की ओर संकेत किया है।

राष्ट्र शब्द की व्युत्पत्ति राज् धातू 'चमकना' अर्थवाली से हुई है। जिसमें औणादिक 'ष्ट्रन्' प्रत्यय जोडा गया है। उसके अनुसार इसका अर्थ है "**राजते दीप्यते प्रकाशते शोभति इति राष्ट्रम्**" अर्थात जो स्वयं देदीप्यमान होनेवाला है वह राष्ट्र कहलाता है । अथवा विविध वैभवों से सुशोभित देश 'राष्ट्र' कहलाता है। अच्छी प्रकार से शासित किए गये भूभाग को ही राष्ट्र संज्ञा दी जा सकती है।

मोनिअर विलियम्स ने 'ए संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी' में राष्ट्र शब्द के कई अर्थ दिए है- Kingdom, Realm, Empire, Dominion, District, Country, People, Nation और Subject है। इसी प्रकार से लगभग श्री वामन शिवराम आप्टे ने भी संस्कृत इंग्लिश डिक्शनरी में लगभग यह ही अर्थ किया है। संस्कृत के कोश ग्रन्थों में राष्ट्र शब्द के अर्थ में विविधता दिखाई देती है। पहले यह

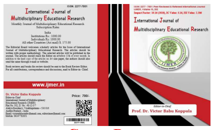
Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer-Peer Reviewed, Refereed & Open Access International Journal - As per UGC Norms
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:4(2), April 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

शब्द व्यापक अर्थ में प्रयुक्त हुआ है। इससे कभी जनपद, विषय, देश, भूमि का अभिप्राय लिया गया है। कभी-कभी इस नाम से उसमें रहने वाले लोगों का तात्पर्य ग्रहण किया गया है। **"राजते तत् राष्ट्रम्"** इस व्युत्पत्ति से संकेत मिलता है कि वह भूभाग या जनसमुदाय जो सर्वतन्त्र स्वतन्त्र हो जो किसी से दबाया न जा गया हो वह राष्ट्र कहलाता है। मत मतान्तर में भले ही राष्ट्र शब्द के अलग-अलग अर्थ हों तब भी आज सर्वसामान्य रुप से राष्ट्र शब्द अंग्रेजी का Nation का और राष्ट्रीयता शब्द इंग्लिश शब्द Nationality का रूपान्तर माना जाता है।

विश्व के प्राचीनतम वैदिक साहित्य वेदों में राष्ट्र शब्द का प्रयोग हमें देखने को मिलता है। ऋग्वेद में **"राष्ट्रं क्षत्रियस्य**[iii]**" "राजा राष्ट्रानाम्**[iv]**" "राष्ट्रं गुपितं जत्रियस्य**[v]**"** आदि संदर्भों से ज्ञात होता है कि क्षत्रिय के द्वारा शासित भूभाग को राष्ट्र कहते हैं।

यजुर्वेद के दशम अध्याय में राष्ट्र शब्द का प्रयोग अनेक बार हुआ है। जैसे-

वृष्ण ऽ ऊर्मिर् असि राष्ट्रदा राष्ट्रं मे देहि स्वाहा ।
वृष्ण ऽ ऊर्मिर् असि राष्ट्रदा राष्ट्रम् अमुष्मै देहि ।
वृषसेनो ऽ सि राष्ट्रदा राष्ट्रं मे देहि स्वाहा ।
वृषसेनो ऽ सि राष्ट्रदा राष्ट्रम् अमुष्मै देहि[vi] ॥

अर्थात तू बल को बढानेवाला है और राष्ट्र देनेवाला है उसे राष्ट्र दो एवं तू राष्ट्र देनेवाला है मुझे राष्ट्र दो। यजुर्वेद के ही एक अन्य मन्त्र में राष्ट्र में न केवल सब प्रकार के लोगों की अपितु पशु और वनस्पति की भी पुष्टि की कामना की जई है, जिससे राष्ट्र के व्यापक रूप का आभास मिलता है।

अथर्ववेद के राष्ट्राभिवर्धन सूक्त में राष्ट्र की वृद्धि के लिए राजा द्वारा अभीवर्त मणि बांधने की प्रार्थ-ना है- **"तेनास्मान् ब्रह्मण स्पतेऽपि राष्ट्राय वर्धय**[vii]**"** जिससे तात्पर्य है कि राजा को राष्ट्र की उन्नति और सुरक्षा के लिए क्या-क्या करना चाहिए । इसको यहाँ प्रतीक रुप में बताया गया है।

डॉ. सूर्यकांत ने 'वैदिक कोश' में राष्ट्र का अर्थ बताते हुए कहा है कि- ऋग्वेद और उसके बाद के ग्रन्थों में राज्य या राजकीय क्षेत्र को राष्ट्र कहा गया है। कीथ और मैकडॉनल ने अपने वैदिक इण्डेक्स में कहा है- "राष्ट्र शब्द ऋग्वेद और उसके बाद के ग्रन्थों में राज्य अथवा साम्राज्य का द्योतक है।"

ब्राहमण ग्रन्थों ने अपनी शैली में राष्ट्र शब्द की इस तरह व्याख्या की है- **"राष्ट्राणि वै विश:**[viii] **" 'क्षत्रं हि राष्ट्रम्**[ix]**' 'राष्ट्र मुष्टिः**[x]**' 'सविता राष्ट्र राष्ट्रपतिः**[xi]**' 'श्री वैः राष्ट्रम्**[xii]**"** ।इन सब उपरोक्त वाक्यों के अनुसार राष्ट्र जनसमूह है, राष्ट्र शक्ति है, राष्ट्र सविता है, राष्ट्र श्री है आदि। इनसे एक राष्ट्र में सुरक्षित और समूह जनसमुदाय की प्रतीति होती है।

वैदिक सन्दर्भों के विवेचन द्वारा प्राचीन भारतीय दृष्टिकोण से राष्ट्र शब्द के अर्थ स्पष्ट होते हैं और उसके स्वरुप, आधार, धारक गुण और प्रमुख तत्वों आदि के संकेत मिलते हैं। निरुक्त में भास्कराचार्यजी ने- **"तत्र संस्थान एकत्व सम्भोग एकत्वं च**

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer-Peer Reviewed, Refereed & Open Access International Journal - As per UGC Norms
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:4(2), April 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

उपेक्षितव्यम् । तत्र एतत् नर राष्ट्रमिव[xiii]" अर्थात भिन्न-भिन्न मनुष्यों के स्थान तथा उपभोग की एकता को राष्ट्र के लिए आवश्यक बताया है।

राष्ट्र की अवधारणा पर चर्चा करते समय दो रूपों मूर्त और अमूर्त इस पर विचार किया जाता है। जो रुप दिखाई पडता है या देखा जा सकता है उसे मूर्त रूप कहा जाता है। जो रुप दिखाई नही पडता है पर जिसका अस्तित्व महत्वपूर्ण है उसे अमूर्त रूप कहा जाता है। । राष्ट्र का आधार भूखण्ड अर्थात् जिसकी भूसीमा निर्धारित है। जिसके अन्तर्गत नदी, पर्वत, सागर, वन, उपवन, प्राचीन पुरातत्व अवशेष, तीर्थस्थल, भवन और समस्त भौगोलिक परिवेश सम्मिलित है। अनेक वर्षो से वहाँ निवास करने के कारण सब लोगों का आपस में प्रेम उत्पन्न हो जाता है। इस प्रकार की एकता के कारण सब लोगों में प्रेम उत्पन्न हो जाने के कारण उन सबमें राष्ट्रीय भावना जागृत होकर वहाँ के नागरिक अपने देश की रक्षा हेतु तन-मन-धन सब अर्पण करते हैं।

राष्ट्र के अमूर्त रुप के अन्तर्गत मुख्य रूप से उस राष्ट्र के लोगों की अन्तरगता, उनकी संस्कृति, परम्परा, भाषा, चिन्तन धारा, साहित्यिक उपलब्धि, गौरव भावना, समस्या आदि का समावेश किया जाता है। राष्ट्रप्रेम, राष्ट्र भक्ति रुपी भावना जागृत करने के लिए राष्ट्र के मूर्त और अमूर्त दोनों रूपों के प्रति राष्ट्रवासियों की प्रेम और सम्मान की भावनायें अपेक्षित हैं।

राष्ट्रीय भावना- अथर्ववेद के भूमि सूक्त में राजनीति शास्त्र तथा समाजशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में वैदिक संस्कृति की मनोहारी झांकी प्रस्तुत की गई है। वेदों में सिर्फ उपासना और इतिहास ही नही है। अपितु राजा और प्रजा के धर्म पर भी विचार किया गया है सायण, महीधर, उव्वट आदि आचार्यों ने वेदों के अर्थ यज्ञ परक अध्यात्मिक अर्थ किये हैं। महर्षि दयानंद सरस्वती ऐसे पहले विद्वान हैं जिन्होंने व्यावहारिक जीवनोपयोगी ज्ञान विज्ञान को जोड़ने वाला अर्थ किया है। मनुस्मृति में राष्ट्र नेतृत्व के संदर्भ में यह कहा गया है

सेनापत्यं च राज्यं च दण्डनेतृत्वमेव च ।

सर्वलोकाधित्यं च वेदशास्त्र विर्दहति[xiv] ॥

अर्थात् जो वेदशास्त्र को जानने वाला व्यक्ति सेनापत्य अर्थात सेनाओं का संघटन और संचालन कर सकता है, दण्ड नेतृत्व और न्याय व्यवस्था का संचालन कर सकता है और सर्व लोकाधिपत्य अर्थात सारे भूमण्डल के चक्रवर्ती राज्य का संचालन कर सकता है।

श्री स्वामी गंगेश्वरा नंदजी उदासीन ने "**विश्वतोमुख भगवान वेद**" नामक पुस्तक के पृ. २४३ में

लिखा है कि विश्व एक महान राज्य है जिसमें भिन्न भिन्न विभागों के अधिकारी मन्त्रिगण अपने-अपने विभागों को कुशलता से चलाते हैं। जैसे आज के प्रजातन्त्र के शासन में राष्ट्रपति, लोकसभा अध्यक्ष प्रधानमन्त्री, अन्य मन्त्रिगण अपने अपने रक्षा, स्वास्थ शिक्षा आदि मन्त्रालय चलाते हैं । विदेशी विद्वानों की प्राय: यह धारणा रही है कि राजनीतिशास्त्र तथा समाजशास्त्र का आगमन भारत में बाहर के देशों से हुआ है। सर्वप्रथम डॉ. काशीप्रसाद जायसवाल ने **हिन्दू राजतन्त्र** लिखकर इन बातों का खंडन

Cover Page

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer-Peer Reviewed, Refereed & Open Access International Journal - As per UGC Norms
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:4(2), April 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

किया है। संस्कृत में मनुस्मृति, महाभारत, कौटिलीय अर्थशास्त्र, कामन्दक नीतिसार, शुक्रनीति, विदुरनीति, राजधर्म काण्ड, राजनीति रत्नाकर जैसे ग्रन्थों में भारतीय राजनीति विषयक सिद्धांतो का पता चलता है।

अथर्ववेद के राष्ट्राभिवर्धन सूक्त में राष्ट्र की वृद्धि के लिए आवाहन किया गया है कि- **अभीवर्तेन मणिना, येनेन्द्रो अभिवावृधे। तेनास्मान् ब्रह्मणस्पते, अभि राष्ट्राय वर्धय**[xv]॥ अर्थात् चारों तरफ अप्रतिहत गति से घुमाने वाली मणि से, जिससे इन्द्र बड़ा हुआ है, हे ब्रह्मणस्पति उस मणि से हम लोगो को राष्ट्र की समृद्धि के लिए बढ़ाओ। प्रकृत सूक्त के अन्य मन्त्रों में भी राष्ट्रोत्थान के विषय में विस्तृत परिचर्चा उद्धृत है और शत्रु रहित राष्ट्र के लिए प्रार्थना की गई है|

अथर्ववेद में पृथिवी (मातृभूमि) हमारे समक्ष सम्पूर्ण मातृत्व के रूप में प्रस्तुत हुई है। वहां कहा गया है कि मेरी माता मातृभूमि है और मैं उसका पुत्र हूं[xvi]। वह हमारी माता (मातृभूमि) मुझ पुत्र के लिए दूध दे[xvii]। ऋग्वेद में कहा गया है कि मातृभूमि को माता मानने वाले ही सच्चे कुलीन हैं। उनमें कोई छोटा-बड़ा नहीं है[xviii]। मातृभूमि, मातृभाषा और मातृसंस्कृति ये तीनों माता के समान सुख देने वाली हैं[xix]। अथर्ववेद के भूमि सूक्त का प्रत्येक मन्त्र मातृत्व की ममता से लबालब भरा है। हे मां भूमि मुझे कल्याण अवस्था से युक्त करे[xx]। वह मां भूमि हमें अपूर्व देय प्रदान करे[xxi]। दूध, गाय, अन्न, हमारी इच्छानुसार धन देकर हमारा सम्वर्धन करे[xxii]। हमारे शत्रुओं को दूर कर हमें शत्रुओं से निर्मुक्त करे[xxiii]। भौतिक जगत में माता का जो मातृत्व दृष्टिगोचर होता है। उसकी स्पष्ट झलक हमें अथर्ववेदीय इस पृथिवी सूक्त में मातृभूमि के विषय में मिलती है। हमें मातृभूमि की रक्षा के लिए समय पड़ने पर तैयार रहना चाहिए तथा तेजस्वी और पराक्रमी बन कर इसका उपभोग करना चाहिए[xxiv]।

यार्णवेऽधि सलिलमग्र आसीद यां मायाभिरन्वचरन् मनीषिणः।

यस्या हृदयं परमे व्यामन्त्सत्येनावृतममृतं पृथिव्याः

सानो भूमिस्त्विषिं बलं राष्ट्रे दधातूत्तमे[xxv]॥

अर्थात् जो पृथ्वी, प्रलयकाल में, क्षारयुक्त समुद्र के जल में समाहित थी, जिस पर मननशील श्रेष्ठ विद्वानों ने अपने कुशल क्रिया-कलापों से विचरण किया था। जिस पृथ्वी का अन्तर्भाग सर्वदा अमर है और महान् अन्तरिक्ष में सत्य से परिव्याप्त है। वह भूमि हम उपासकों के उत्तम राष्ट्र में श्रेष्ठ कान्ति और बल स्थापित करे। इन मंत्रों में पृथिवी के साथ मातृत्व, आत्मीयता तथा तादात्म्य का भाव प्रकट होता है।

निष्कर्ष- संपूर्ण वैदिक वांग्मय में अनेकों बार राष्ट्र के विषय का वर्णन हुआ है| ऋग्वेद से लेकर अथर्ववेद तक अनेक सन्दर्भ प्रस्तुत किए गए हैं| वैदिक साहित्य से लेकर लौकिक साहित्य तक राष्ट्रप्रेम और राष्ट्र भावना से ओत-प्रोत है| साहित्य में लेश मात्र भी न्यूनता नहीं है तथापि अद्यतनीय समाज में राष्ट्र से पूर्व व्यक्ति अपनी जाति, संप्रदाय और धर्म को लेकर राष्ट्र से अलगाव भावना से ग्रसित हो जाता है, यदि इस प्रकार के कारणों से निवृत्त होना है तो आवश्यकता है की आज की पीढ़ी के विचारों को परिवर्तित करना होगा| भारत की संस्कृति और वैदिक ज्ञान परम्परा का आधार रहा है कि आहार, विहार और विचार यदि

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer-Peer Reviewed, Refereed & Open Access International Journal - As per UGC Norms
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:4(2), April 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

शुद्ध होगा तो हम एक श्रेष्ठ राष्ट्र का निर्माण कर सकते हैं। यदि हमें विश्व पटल पर भारत की ख्याति को स्थापित करना है तो यह अति आवश्यक है कि प्रत्येक नागरिक में स्व-राष्ट्र के प्रति प्रेम, सौहार्द और सम्मान की निगूढ़ भावना हो।

---

[i] अथर्ववेद १२-१-१२

[ii] वाल्मीकि रामायण

[iii] ऋग्-४-४२-१

[iv] ऋग्-७-३४-११

[v] ऋग्-१०-१०९-३

[vi] शुक्लयजुर्वेद १०-२

[vii] अथर्ववेद १-२९-१

[viii] ऐतरेय ब्राह्मण ८-२६

[ix] ऐतरेय ब्राह्मण ७-२२

[x] शतपथ ब्राह्मण १३-२-९-७

[xi] शतपथ ब्राह्मण ११-४-३-१४

[xii] शतपथ ब्राह्मण ६-७-३-७

[xiii] निरुक्त ७-५-८-९

[xiv] मनु. १२-१००

[xv] अथर्ववेद १-२९-०१

[xvi] अथर्ववेद १२-१-१२

[xvii] अथर्ववेद १२-१-१०

[xviii] ऋग् १-१३-०९

[xix] अथर्ववेद १२-१-६३

[xx] अथर्ववेद १२-१-१३

[xxi] अथर्ववेद १२-१-१९

[xxii] अथर्ववेद १२-१-४१

INTERNATIONAL JOURNAL OF MULTIDISCIPLINARY EDUCATIONAL RESEARCH
ISSN:2277-7881(Print); IMPACT FACTOR :10.16(2026); IC VALUE:5.16; ISI VALUE:2.286
Peer-Peer Reviewed, Refereed & Open Access International Journal - As per UGC Norms
(Fulfilled Suggests Parameters of UGC by IJMER)
Volume:15, Issue:4(2), April 2026
Scopus Review ID: A2B96D3ACF3FEA2A
Article Received: Reviewed: Accepted
Publisher: Sucharitha Publication, India
Online Copy of Article Publication Available: www.ijmer.in

Cover Page

xxiii अथर्ववेद १२-१-६२

xxiv अथर्ववेद १२-१-८

xxv अथर्ववेद १२-१-८